*शब्द महत्वपूर्ण हैं लेकिन क्या उनके आशय वही हैं**

रघुराम जी. राजन

शिक्षा पूरी कर लेनेवाले विद्यार्थियों को, उनके प्रोफेसर को तथा उनके गर्वित माता-पिता, भाई-बहन और मित्रों को बधाई।

यदि आप विशिष्ट हैं तो आपको, इस बात की खुशी हो रही होगी कि आप विश्वविद्यालय को अलविदा कह रहे हैं और आपकी नई यात्रा प्रारंभ हो रही है, इस बात का दुःख होगा कि बहुत सी जानी-पहचानी चीजें आपसे पीछे छूट रही हैं, और आपको चिंता इस बात की होगी कि आप जिस कार्य के लिए या उच्च शिक्षा के लिए जा रहे हैं, उसकी चुनौतियों पर खरे कैसे उतरेंगे। आपको यह भी चिंता हो रही होगी कि आपने जो अगला कदम उठाया है या उठाने वाले हैं वह कितना सही है।

ये सब सोचना बिल्कुल सामान्य बात है। यह मानते हुए कि आपने एनआईबीएम में प्रशिक्षण ग्रहण किया है, इसलिए इस प्रश्न का कि क्या आप खरे उतरेंगे, उत्तर पक्का 'हाँ' ही होगा। जहां तक इस प्रश्न के उत्तर का सवाल है कि क्या आपने अगला कदम सही उठाया है, थोड़ा सा बेचैन करने वाला है - क्योंकि इसके बारे में आपको अभी से पता नहीं है। मेरा यह काम है कि आपकी शिक्षा मुकम्मल होने पर कुछ विचारों की अंतिम छाप आप पर छोड़ी जाए। जैसाकि मैंने अभी कहा कि मैं क्या बात करने वाला हूँ, मैं हाल में हुए कुछ अनुभवों पर बात करूंगा जिसे अमरीकी लोग ''सीखने का क्षण'' के नाम से जानते हैं। और उसके बाद मैं आपके कैरियर के बारे में कुछ सलाह देना चाहूँगा जो आपके लिए मूल्यवान हो।

अनुभव के बारे में मैं अपनी बात यहां से प्रारंभ करूंगा कि आज भारत किस स्थान पर खड़ा है। भारत विश्व में सबसे तेजी से विकास करने वाला बड़ा देश है, हालांकि विनिर्माण की क्षमता का उपयोग 70 प्रतिशत तक ही कम स्तर पर है और दो खराब मानसून की वजह से कृषि में वृद्धि धीमी है, जबकि हमारी क्षमता निःसंदेह बहुत अधिक है।

लेकिन, विकास का होना कार्यनिष्पादन की माप का मात्र एक पैमाना है। प्रति व्यक्ति जीडीपी का स्तर भी महत्वपूर्ण है। प्रति व्यक्ति आय के आधार पर हम अभी भी विश्व के सबसे बड़े गरीब देश हैं, और प्रत्येक नागरिक के सरोकारों को यथोचित रूप से पूरा करते हुए हमें अभी लम्बा सफर तय करना है। हमारी तुलना कई बार चीन से की जाती है। लेकिन चीन की अर्थव्यवस्था जो 1960 के दशक में हमसे छोटी थी अब हमारे बाजार की विनिमय दर के हिसाब से पांच गुना बड़ी है। एक औसत चीनी नागरिक एक औसत भारतीय नागरिक से चार गुना ज़्यादा अमीर है। इसे थोड़ा अच्छे अंदाज में कहें तो हम इस समय जिस स्थान पर हैं वहां से हमें अभी लंबी दूरी तय करना है।

एक केंद्रीय बैंकर के रूप में जो सदैव व्यावहारिक होता है, मैं भारत की बड़ी अर्थव्यवस्था के तेजी से बढ़ने पर बहुत अधिक उत्साहित नहीं हो सकता हूँ। इस समय हमारी विकास दर से पता चलता है कि सरकार और हमारे देश के लोग कितना कठिन परिश्रम कर रहे है, किंतु हमें इस निष्पादन को अगले 20 वर्ष तक दोहराते रहना है इससे पहले कि हम प्रत्येक भारतीय को एक बढ़िया जीविका दे सकें। यह इस बात की उपेक्षा नहीं है कि क्या कुछ किया जा चुका है या किया जा रहा है। केंद्र सरकार और राज्य सरकारें मिलकर एक सुदृढ़ और क़ायम रखने योग्य विकास के लिए मंच तैयार कर रही हैं, और मुझे यक़ीन है कि इसका परिणाम ज़रूर मिलेगा, किंतु जब तक हम इस मार्ग पर कुछ समय तक के लिए टिके न रहें तब तक हमें सावधानी बरतनी होगी।

हमें याद रखना होगा कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हमारे देश की प्रतिष्ठा काफी बड़ी है, जिसे बीते समय में अपेक्षा से कम हासिल हुआ है। यही कारण है कि ब्रिक्स देशों में प्रति व्यक्ति आय के आधार पर हमारा देश अभी भी सबसे गरीब देश है। हमें अपने नज़रिये को बदलकर लंबे समय तक अपने वायदों को पूरा करना होगा - कार्यान्वयन, कार्यान्वयन और कार्यान्वयन द्वारा हम इस समय मात्र अपने विकास की अधिक गति से ही काम नहीं चला सकते, तब तक जब तक हम अपनी स्वयं की महानता में विश्वास न करने लगें और भविष्य की संपदा को इस प्रकार वितरण प्रारंभ कर दें जैसेकि वह हमने पहले ही प्राप्त कर ली है, न कि हम विकास को निरंतर बनाए रखने के लिए जो अपेक्षित है उसे करना बंद कर दें। यह कहानी भारत के अतीत में कई

---

* डॉ. रघुराम जी. राजन, गवर्नर, भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा 20 अप्रैल 2016 को एनआईबीएम, पुणे के 12वें दीक्षांत समारोह में दिया गया वक्तव्य।

बार दोहराई जा चुकी है ताकि हम यह न समझ सकें कि उसका अंत कैसे होता है।

एक विदेशी पत्रकार ने एक बार पूछा था कि विश्व में भारत को एक चमकते स्थान के रूप में देखना आपको कैसा लगता है। मैंने उसके जवाब में एक मुहावरे का इस्तेमाल करते हुए कहा था ''अंधों में काना राजा'' अथवा ''अंधों की भूमि पर एक आंख वाला व्यक्ति राजा के समान ही होता है''। इस मुहावरे का बड़ा पुराना बहुराष्ट्रीय इतिहास रहा है। डच दार्शनिक एरासमस ने इसका इस्तेमाल लैटिन में किया था और लिखा था ''इन रीजने कयकोरम रेक्स एस्ट लसकस।'' किंतु संभवतः वे इसके पूर्व किए गए कार्य से प्रेरित थे।

मेरा आशय हमारे निष्पादन पर ज़ोर देना था क्योंकि विश्व में विकास की दर कमज़ोर थी, किंतु हम यहां भारत में और अधिक विकास की भूख रखते हैं। तब मैंने यह स्पष्ट किया कि हमने अभी अपनी पूरी क्षमता का इस्तेमाल नहीं किया है, हालांकि किए जा रहे समस्त सुधार के होते हुए विकास में हमने अत्यधिक गति पकड़ ली है।

लेकिन, समाचार के भूखे हमारे देश में घरेलू समाचारपत्रों ने मेरे द्वारा कहे गए मुहावरे को शीर्षक बना के पेश किया। सच कहें तो उन्होंने भी इस मुहावरे को उसके संदर्भ के आसपास के अर्थ को ही प्रस्तुत किया था, किंतु कुछ लोगों ने शीर्षक से आगे का अर्थ निकाल लिया। इस प्रकार वह साक्षात्कार थोड़ा विवादास्पद बन गया था, और लोगों में यह संकेत चला गया कि मैं अधिक निष्पादन करने के बजाय सफलता की निंदा कर रहा था।

और भी सामान्य रूप से देखें तो जब कोई सार्वजनिक हस्ती कोई शब्द या मुहावरा बोलता है तब उसका आशय उसके अत्यधिक गाढ़े अर्थ से होता है। जब शब्द, संदर्भ से परे होकर त्रिशंकु बन जाते हैं, जैसाकि समाचारपत्र के शीर्षक में दिखाया गया, तब किसी भी व्यक्ति के लिए यह उचित खेल बन जाता है कि वह शरारत करने की दृष्टि से उसे अपने हिसाब से अर्थ दे दे। निश्चित ही, स्थिति तब और भी बदतर हो जाती है जब शब्दों या मुहावरों का अर्थ अन्यत्र भी एक जैसाही होता है, क्योंकि तब उन्हें बहुत आसानी से और जानबूझकर तोड़ा-मरोड़ा जा सकता है। यदि हमें यथोचित रूप से सार्वजनिक संवाद स्थापित करना है तो हर एक को शब्दों का वही अर्थ लेना होगा जो उनके संदर्भ के अनुसार हों, उससे हटकर नहीं, जिसकी उम्मीद बहुत कम है।

लेकिन मैं स्वयं नेत्रहीन व्यक्तियों के वर्ग से क्षमा चाहता हूँ कि ऐसा कहकर मैंने उन्हें तकलीफ पहुंचाई। हालांकि मुहावरे में यह बात कही गई है कि नेत्रहीन होने से एक आंख का व्यक्ति बेहतर होता है। कुछ पल के लिए यदि इसपर ध्यान दें तो यह सही नहीं है। नेत्रहीन अपनी अक्षमता से कहीं ज़्यादा क्षमताएं विकसित कर सकते हैं। सच तो यह है कि अपनी अक्षमता को पार पाने की इच्छाशक्ति और सफलता की भूख मात्र से ही वे आंखों वालों के इस संसार में उनसे कहीं अधिक हासिल कर सकते हैं। इतना ही नहीं उनकी अन्य क्षमताएं जैसे - स्पर्श, सूंघना, और सुनना बहुत प्रखर होती हैं, इसलिए नेत्रहीन व्यक्ति विश्व में नये परिदृश्य एवं नई विविधताएं पैदा कर सकते हैं, उसे और भी समृद्ध तथा गतिमान बना सकते हैं। नेत्रहीनों के सामर्थ्यवान न होने का अर्थ लगाए जाने के बारे में सचमुच मुझे खेद है।

लेकिन, इससे एक महत्वपूर्ण सवाल पैदा होता है। हमारी भाषा का कितना हिस्सा इस प्रकार के आशयों से भरा हुआ है जिसे तोड़-मरोड़ कर पेश किया जा सकता है? शब्दों का गलत चयन कितना क्षम्य होगा यदि उसका स्पष्ट आशय भिन्न हो?

मैं आपको दो उदाहरण देना चाहता हूँ। गांधीजी कहा करते थे ''यदि आंख के बदले आंख ले ली जाए तो सारा विश्व अंधा हो जाएगा''। इससे स्पष्ट है कि इसका निहितार्थ यह है कि समूचा विश्व अंधा हो जाए यह वांछित नहीं होगा। कोई इसे अपमान के रूप में भी ले सकता है क्योंकि देखने वालों की तुलना में नेत्रहीनता कमतर मानी जाती है, और इस कहावत को पक्षपाती माना जाएगा। हालांकि गांधीजी का फोकस बदला लेने की नीति की मूर्खता पर था, न कि नेत्रहीनता पर, और उनका आशय नेत्रहीनों की उपेक्षा करना नहीं था।

मेरा दूसरा उदाहरण एक संकाय-बैठक से था जिसमें मैंने भाग लिया था, जिसमें एक पुरुष प्रोफेसर ने अपनी बात शिद्दत से रखने के लिए ''एज ए रुल ऑफ थंब'' व्यावहारिक सिद्धांत यही है, मुहावरे का प्रयोग किया था। इतिहास की स्त्री प्रोफेसर अत्यधिक नाराज़ हो गईं। उन्होंने उसकी व्याख्या करते हुए बताया कि 'द रुल आफ थंब' का

इस्तेमाल ऐतिहासिक रूप से उस छड़ी के लिए होता था जिसकी चौड़ाई अधिकतम होती थी जिससे एक व्यक्ति क़ानून तोड़े बिना अपनी पत्नी की पिटाई कर सकता था। वह इस बात पर नाराज़ थी कि पुरुष प्रोफेसर ने इस मुहावरे का प्रयोग इतनी आसानी से कैसे कर दिया, ऐसा लगता है कि घरेलू हिंसा की अनदेखी कर दी गई हो। पुरुष प्रोफेसर को उस मुहावरे के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य का कोई आभास नहीं था, और उन्होंने उसके लिए तहेदिल से माफी मांग ली। उनकी अज्ञानता से स्पष्ट था कि उनका आशय किसी को आहत करना नहीं था, फिर भी स्त्री प्रोफेसर आहत हुईं।

यहां पर दो अहम मुद्दे हैं। पहला यह कि यदि हम अपना सारा समय यह देखने में लगा दें कि हम किस प्रकार के शब्दों का प्रयोग कर रहे हैं और आहत न करने वाली भाषा का प्रयोग कर रहे हैं या फिर सावधानीपूर्वक प्रत्येक बात को सुरक्षित रखते हुए बोल रहे हैं, तो फिर हम नीरस बन जाएंगे और हम अपनी बात नहीं कह पाएंगे क्योंकि कोई हमें सुनेगा नहीं।

उदाहरण के लिए, 'आंख के बदले आंख से पूरा विश्व अंधा मात्र बन जाएगा' के स्थान पर यह कहा जा सकता है 'बदले की भावना सामूहिक कल्याण को कम कर देती है' । बाद वाली बात बड़ी छोटी सी है, अहानिकर है तथा सारपूर्ण है, लेकिन अधिकांश लोगों के लिए निरर्थक है। इसके बजाय हम यह कह सकते हैं ''शरीर के किसी भी अंग को दूसरे अंग के बदले ले लेने से आबादी की सामूहिक क्षमताओं को अस्थायी रूप से कम कर देगी और इस प्रकार से आबादी प्रभावित होगी, जब तक कि वे ऐसी क्षमता विकसित न करलें जो उन्हें उनके शरीर के लिए अंग की क्षतिपूर्ति न कर दे'' यह पुनर्कथन मूल से अधिक सही है, लेकिन इसमें जिंदादिली नहीं है इसलिए इसमें विश्वास किए जाने का अभाव है।

वहीं पर शब्दों या ऐसे मुहावरों पर ध्यान न देना जिनसे आहत होने का जोखिम लगातार बना रहता है जो घिसे-पिटे कमज़ोर करने वाले होते हैं और आपकी तरक्की को रोकते हैं। जब हम बैंकर्स, वैज्ञानिक, इंजीनियर्स अथवा सर्जन शब्द का खालिस प्रयोग करते हैं तब प्रायः उसका संदर्भ 'पुरुष' से होता है तब इससे दुर्भाग्यवश निरंतर एक समान तरीके से होता है यही आभास होता है कि ये कार्य स्त्रियों के लिए नहीं हैं। स्पष्ट है कि ऐसा करते समय हम उनकी बढ़ती उपस्थिति को नज़रअंदाज करते हैं, यहां तक कि इन क्षेत्रों में स्त्रियों के बढ़ते वर्चस्व को नकारते हैं। यहां ज़रूरत इस बात की है कि इसके लिए हमें क्या उपाय करना चाहिए?

मेरे विचार से हमारा काम यह है कि सार्वजनिक संवाद की अपनी क्षमता को बेहतर बनाना चाहिए। वक्ता को शब्दों के प्रयोग को लेकर अधिक सावधान रहना चाहिए और अनावश्यक रूप से आहत करने वाला नहीं होना चाहिए। वहीं पर सुनने वाले को हर जगह अपमान नहीं ढूंढना चाहिए, और शब्दों को उसके संदर्भ में रखकर उसका आशय समझना चाहिए। दूसरे शब्दों में, प्रभावी संप्रेषण और बहस के लिए, उस तरह नहीं जैसाकि हम कभी-कभी टीवी शो पर देखते हैं कि क्रोधित होकर विचारों का आदान-प्रदान करते हैं, हमें आदर और सहिष्णुता दोनों की आवश्यकता है। इस सबकी सबसे खतरनाक बात यह है कि हम संप्रेषित नहीं करते या विमर्श नहीं करते हैं, इसलिए तब हम बेकार की घिसी-पिटी बातों को उभारते हैं जिसे कोई चुनौती नहीं दी जा सकती, और भेदभाव बढ़ता जाता है। हमारे जैसे देश में जिसकी स्थापना विकास और विविधता के बीच हुई है, यह यथार्थ में एक त्रासदी ही होगी।

आपके चिंतन के लिए इतनी खूराक पर्याप्त है। लेकिन मेरी आशा से भरपूर कैरियर के लिए सलाह यह है कि हममें से अधिकांश महत्वाकांक्षी होते हैं और अपने कैरियर के लिए एक लक्ष्य अपने दिमाग में रखते हैं। हम समझते हैं कि यदि हम सफल हो गए तो खुशहाल रहेंगे - बड़ी बहुराष्ट्रीय कंपनी के सीईओ बन जाएंगे, नोबल पुरस्कार हासिल करेंगे, सिनेमा जगत के बड़े सितारे बन जाएंगे, आदि-आदि। और इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए कभी-कभी हम ऐसे कार्य स्वीकार कर लेते हैं जो हमें नापसंद है और यह सोचते हैं कि इस कार्य को करने में जो तकलीफ है उसकी भरपाई अंततः उससे मिलने वाले फायदे से हो जाएगी।

जब हम इस प्रकार के कारण बताते हैं, तब मुझे लगता है कि हम कारण को उलटे ढंग से देखते हैं। आप शायद ही मात्र इस बात से कभी खुश हो पाएंगे कि आप सफल हैं, लेकिन आप तब अधिक सफल माने जाएंगे यदि आपको अपने कार्य को करने से प्रसन्नता प्राप्त

होती है। वस्तुतः इस संबंध में कुछ चिंतनशील अध्ययन भी हुए हैं जिसमें इस प्रकार की बात कही गई है। इसलिए जब आपको यह चयन करना है कि आपको क्या करना है, तब आप उसके अंतिम बिंदु पर फोकस न करें। बल्कि, इस बात पर फोकस करें कि क्या आपको वह कार्य पसंद है। यदि आप अंतिम बिंदु तक नहीं भी पहुंच पाते हैं तो भी ज़्यादा संभावना इस बात की होगी कि आप अपने लक्ष्य के निकट होंगे, और आपके पास आनंदमय जीवन होगा। मेरी सलाह समाप्त हो चुकी है, आप सभी को बधाई, और मुझे उम्मीद है कि आप योग्य हैं और आपको सफलता अवश्य प्राप्त होगी। शुभकामनाएं और धन्यवाद।